International Journal of Advanced Academic Studies 2019; 1(1): 95-101

E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
IJAAS 2019; 1(1): 95-101
Received: 25-05-2019
Accepted: 27-06-2019

डॉ० अशोक कुमार
ल0 न0 मि0 वि0, दरभंगा, ग्राम एवं पत्रालय–बेलामेध, भाया–दलसिंहसराय, जिला–समस्तीपुर

Corresponding Author:
डॉ० अशोक कुमार
ल0 न0 मि0 वि0, दरभंगा, ग्राम एवं पत्रालय–बेलामेध, भाया–दलसिंहसराय, जिला–समस्तीपुर

गर्भधान संस्कार की मनोवैज्ञानिकता

डॉ० अशोक कुमार

सारांश

हम कह सकते है कि जिस प्रकार की सन्तान की इच्छा हो, उसी प्रकार की तैयारी माता–पिता को करनी होगी। क्योंकि आत्मा मृत्यु के पश्चात् पूर्व शरीर के विचारानुकूल [1] या चिन्तनानुकूल [2] या कामनाओ [3] को ही मानता हुआ जो–जो इच्छा करता है, उस इच्छाओं के फलस्वरूप उस–उस योनि में ही [4] प्राण ग्रहण करने के लिए सूक्ष्म शरीर को लेकर चलता है। वह पहले–पहले पिता के वीर्य में विकास पाता है, और उसके पश्चात् माता के गर्भाशय में प्रवेश करता है। इसलिए जिस प्रकार का भोजन पिता करेगा, उसी प्रकार का शरीर तैयार होगा। पथ्यकर आहार–विहार का सेवन करके स्त्री अपना और गर्भस्थ शिशु का स्वास्थ्य बनाये रखने की कोशिश करे। [5] यह तो रही भौतिक बात। परन्तु इस भौतिक शरीर पर पिता के मन का भी प्रभाव पड़ेगा। उसमें पिता के प्रत्येक अंग से किये हुए कार्यो की प्रतिच्छाया रहेगी। अतः पिता को सोच लेना चाहिये, कि जिस प्रकार के संतान की उसे इच्छा है, उसी प्रकार का आचरण होना चाहिए। स्त्री और पुरूष जैसे आहार, व्यवहार तथा चेष्टा से संयुक्त होकर परस्पर समागम करते हैं, उनका पुत्र भी वैसे ही स्वभाव का, होता है। [6]

जो सुधार का काम गर्भाधान के समय और गर्भ के नौ महीने में माता कर सकती है वह सृष्टि के सारे संशोधक पदार्थ या सारे सुधारक मिलकर भी नहीं कर सकते। आगामी जन्म, चित्त में जिस प्रकार की भी वासना होती है, उनके अनुकूल पुनर्जन्म होता है। लोकोक्ति भी इस में प्रमाण है– ''अन्तमता सो गता'' अर्थात् अन्त में जैसी मति (वासना) होती है उसी के अनुकूल गति होती है। इसी तरह माता की भी मन जिस प्रकार की संतान की इच्छा करेगी तो वैसी ही संतान होगी। जाकी रहि कामना जैसी, जगत रूप देखै तिंह तैसी। [7] इसलिए भाव ही कारण है। [8] जिसकी जैसी भावना होती है, वैसी ही उसे सिद्धि प्राप्त होती है। [9]

माता एक साचाँ है, माता की रूचि–परिष्कार के रूप में इन संस्कारों द्वारा उसी साँचा को सुन्दरतम बनाने का प्रयत्न करते है। माताओं अपने अन्दर आत्म शक्ति को पहचानों अपनी मानसिक बल को पहचानों और इसे क्रियान्वित करो। आहार, रोजमर्रा के व्यवहार, आदतें, विचारधारा, मानसिक बदलाव, स्थिति सभी का गर्भ पर प्रभाव पड़ता है। देवत्व का अंश अपने अंदर विकसित करने वाली हो। इसीलिए गर्भाधान से गर्भावस्था की यह अवधि बहुत ही महत्वपूर्ण है, उसका लाभ उठाना चाहिए। अपने मन की विचारधारा की दिशा आप तय कर सकती हैं। हमेशा सकारात्मक रहें, खुश रहें, प्रशन्नचित्त रहें, आनंदमय रहें और आनन्द दायक संतान का निर्माण करें।

प्रस्तावना

वर्त्तमान में प्रत्येक स्त्री–पुरूष कलह से भरे हुए हैं, क्रोध से, ईर्ष्या से, एक–दूसरे के प्रति संघर्ष से, अहंकार से, एक दूसरे से मुँह फेर कर बैंठे हैं, एक–दूसरे के मालिक बनना चाह रहे हैं। इसी बीच उनके बच्चे पैदा हो रहे हैं। ये बच्चे कैसे सुयोग्य होंगे, ये आध्यात्मिक जीवन में कैसे प्रवेश पाएंगे ? इसलिए गर्भधान संस्कार की मनोवैज्ञानिकता को समझना आवश्यक है। माता की मनोभावों, आचार, चेष्टा, भय, प्रसन्नता, आँखें बंद करने आदि आचरणों, पति आदि के दर्शनों का सन्तति पर क्या प्रभाव गर्भाधान एवं गर्भावस्था काल में होता है? इन सब बातों की जानकारी से अवगत होंगे। संतान के निर्माण में जो सबसे महत्त्वपूर्ण योगदान मन का है जिसे लोग भुला दिये हैं। जिसके विना हम सुयोग्य संतान निमार्ण करने से चुक जाते हैं। जो जीवन में सदा साथ रहने वाला पुत्र–रत्न है उसकी उत्पत्ति में दम्पति के मन का क्या योगदान रहता है? गर्भधान संस्कार की मनोवैज्ञानिकता हमें सुयोग्य संतान निर्माण की कला को सिखाता है। इसमें हम दम्पति के मन से संबंधित सभी तथ्यों पर विचार करेंगे। आचार–विचार और विश्वास हमारे जीवन एवं संतति को कैसे़ प्रभावित करता है? मुझे लगता है कि इस संस्कार की मनोवैज्ञानिकता को जाने विना एक सुयोग्य संताान का निर्माण नहीं हो सकता। एक इच्छित खुश व स्वस्थ दिव्य संतान उत्पन्न करने के लिए माँ किस तरह शारीरिक रूप से स्वस्थ, मानसिक रूप से प्रसन्न और आध्यात्मिक भावना से ओत–प्रोत व समर्थ रहे, इसमें उन समस्त व आसानी से अपनाई जाने वाली तकनीकों के बारे में जानकारी दी गई है,

गर्भधान संस्कार की मनोवैज्ञानिकता की दृष्टि से विचार करे तो संस्कार मन में प्रस्थापित आदर्श हैं, जो जीवन–व्यवहार के नियामक और प्रेरक होते हैं। मनुष्य अपने जीवन में सत्य–असत्य का निर्णय

इन आदर्शों के आधार पर ही करता है। मनुष्य में मानवोचित गुण–कर्म–स्वभाव की प्रेरणा इन्हीं संस्कारों की देन है। यदि चरित्र वृक्ष है तो संस्कार उसका बीज है।

जिस प्रकार समुद्र के धरातल पर आने वाली सूक्ष्म तरंगों का प्रभाव समूचे समुद्र पर पड़ता है। उसी प्रकार संधारण से लेकर उन्नत एवं परिपुष्टतम विचार हमारी सूक्ष्म पेशियों को प्रभावित किया करते है। मानसिक सोच का शरीर पर प्रभाव पड़ता है। शरीर तथा मन का तो चोली–दामन का साथ है। यह हो नहीं सकता कि मन तो रोगी रहे तथा शरीर स्वस्थ बना रहे।

विचारों में बहुत बड़ी शक्ति है। प्रसिद्ध विचारक स्वेटमार्डन कहते हैं कि 'सोच वह समान है जिसमें से चीजें बनाई जाती है।[10] 'हम अपना भविष्य अपने विचारों की श्रृंखला से यह जाने बिना बनाते हैं कि वह अच्छा बन रहा है या बुरा।[11] विचारों पर भी हमारा भविष्य निर्भर है। वर्तमान तो विचारों के सहारे चल ही रहा है, भविष्य भी विचारों पर ही निर्भर है। उसे हम चाहे जैसा बना सकते हैं। 'अपने विचारों पर नियन्त्रण कीजिए तो आपके भविष्य पर भी नियन्त्रण हो जायेगा।[12] पुरूष जैसा होने की इच्छा करता है, वैसा बनता है।[13] ''इंसान का जीवन उसके विचारों से बनता है।''[14] ''इंसान वैसा ही होता है, जैसा वह सारे दिन सोचता है।''[15] यह कथन पूर्ण सत्य एवं अनुभूति जन्य है। 'आपका जीवन आपके चिन्तन के अनुरूप बनता है।' दूसरे शब्दों में जो पदार्थ हम शरीर में ग्रहण करते हैं उसी से हमारे भौतिक शरीर का स्वरूप बनता है और इसी प्रकार जो विचार हमारे भीतर जागृत होते हैं और भावनात्मक प्रतिक्रियाएँ हमारे शरीर से गुजरती हैं, उनका प्रभाव हमारे शरीर के स्वरूप और कोमलता या कठोरता पर पड़ता है।

शरीर–वैज्ञानिक और मनस्विद डॉ. रौल्फ ने माँस–पेशियों के तंतुओं और मानव शरीर में उनकी विविध बनावटों का अध्ययन करते हुए पाया कि शारीरिक और भावनात्मक परेशानियों का शरीर की माँस–पेशियों की कठोरता पर सीधा प्रभाव पड़ता है। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि भय, दुःख और क्रोध की भावनाओं के आने पर माँस–पेशियाँ कुछ सुरक्षात्मक मुद्रा में फैलती हैं। यदि व्यक्ति इन अवस्थाओं से बार–बार गुजरता है, तो ये पेशियाँ कठोर होनी शुरू हो जाती हैं और व्यक्ति विशिष्ट भावनात्मक अवस्था में एक शारीरिक दृष्टि विशेष अपनाने लगता है। जब ऐसी अवस्था आ जाती है तो शरीर की सहज एकरूपता गड़बड़ा जाती है और समग्र रूप से लचीलेपन का अभाव हो जाता है और तज्जन्य असंतुलन आ जाता है। इस प्रकार हम अपने आचार–विचार से (प्रार्थना आदि से) अपने शरीर को स्वस्थ एवं संतुलित कर सकते हैं।[16]

माँसपेशियों तथा स्नायु संस्थान चिन्ता, भय, राग–द्वेष, ईर्ष्या, मत्सर, परोपकारचिकीर्षा, तनाव, उन्माद्, डिप्रेशन, काम, क्रोध, अहंकार, लोभ, तृष्णा, आदि उद्वेगों के कारण माँसपेशियों तथा स्नायु संस्थान के केन्दों पर 'एसिटिव कोलेन' नामक पदार्थ उत्पन्न होता है। लैक्टिक अम्ल भी बनने लगता है जिससे शरीर कड़ा हो जाता है। यह कड़ापन रक्त संचार एवं पेशीय संचालन में रूकावट पैदा करता है जिस कारण नाना प्रकार के रोग होने लगते हैं।[17]

निम्न मानसिक विचार से–निम्न रोग का होना बताया गया है।[18]

निम्न मानसिक विचार से	**निम्न रोग का होता है**
घृणा, स्वार्थ	हृदय रोग।
धन नाश	निर्बलता, क्षय, मूत्राशय संबंधि रोग।
दरिद्रता	अजीर्ण तथा मंदाग्नि
निराशा या चिन्ता	आँत रोग।
धृणा, बदले की इच्छा, भय एवं चिन्ता	उन्माद रोग।
क्रोध	भुख नहीं लगना, रक्त प्रवाह अव्यवस्थित होना, दिल की धड़कन बढना
भय	दिल की धड़कन बढ़ना
शांतचित्त बैठने या ध्यान के अभ्यास से	हृदय की गति सामान्य या मन प्रसन्न होता है।
हँसते–मुस्कराने से	मानसिक तनाव दूर होता है।
हँसने से	फेफड़ा का विकास रक्त संचार सही होता है।

मनः कामना के बिना इस संसार में कोई कार्य नहीं हो सकता।[19] अंग–अंग से बालक उत्पन्न होता है। प्रत्येक अंग की प्रतिच्छाया उसके शरीर पर पड़ती है। हृदय की सभी भावनाएं साररूप से वीर्य के उस कण में होती है, जिसको जीव ने अपना पहला शरीर बनाया हुआ है।[20] इसलिए 'रोग न हो और पुत्र की इच्छा प्रबल हो तो 'हरिवंशपुराण' का श्रद्धा–भक्ति के साथ मनोयोग पूर्वक श्रवण करना चाहिए। इसके लिये 'संतान–गोपाल' मन्त्र [21] का जाप भी किया जाता है। चिंतन की यह प्रक्रिया आपके दिमाग पर छाप छोड़ देती है। यह छाप बाद में आपके जीवन में तथ्य और अनुभव के रूप में सामने आती है। विचार और भावनाएं शरीर के माध्यम से गुजरेंगी उनकी गुणवत्ता के अनुरूप भी शरीर की माँसपेशियां बनेंगी।

मनुष्य मन से जो चिन्तन करता है, उसे वाणी से कहता है (मौखिक रूप से बोले या न बोले आत्मिक वाणी तो प्रस्फूटित होती है।) और जो वाणी से कहता है उसे शरीर से करता है (स्थुल शरीर से करें या न करें शुक्ष्म शरीर से स्वप्नवत कार्य तो करता है) और जो शरीर से करता है उसके फल को प्राप्त करता है।[22] इसलिए गर्भाधान के समय पति–पत्नी के हृदय में जिस प्रकार के विचार होते हैं–उनके हृदय और अन्तश्चक्षु के सम्मुख जो चित्र होता है, भावी शिशु उन्हीं सब के प्रतिबिम्ब को लेकर जन्म लेता है। जैसी धार्मिक, शूर, विद्वान्, तेजस्वी संतान चाहिये, वैसा ही भाव रखना चाहिये और ऋतुस्नान के बाद से प्रतिदिन वैसी ही वस्तुओं को देखना और चिन्तन करना चाहिये। इसी को लक्ष्य कर कहा गया है–स्त्री–पुरूष जैसे आहार–विहार और चेष्टा आदि से युक्त होकर परस्पर समागम करते हैं, संतान भी वैसी ही होती है। इसलिये स्त्री–पुरूष को संतानोत्पत्ति के लिये गर्भाधान में सर्वथा निर्दोष हो प्रवृत्त होना चाहिये। इससे स्पष्ट है कि अपेक्षित गुणों से युक्त संतान उत्पन्न करना माता–पिता के उत्तम भावों पर निर्भर है और यह भाव गर्भाधान संस्कार पर निर्भर करता है।[23] यह संस्कार माता–पिता की शारीरिक तथा मानसिक भाव से संतान नहीं, अपितु सुयोग्य संतान बनाने का संस्कार है।

हमारे शास्त्रों में कहा गया है और यह विज्ञानसिद्ध है कि ऋतु–स्नान के पश्चात् स्त्री पहले–पहल जिसको देखती है उसी का संस्कार उसके चित्त पर पड़ जाता है और वैसी ही संतान बनती है। इसलिए महर्षि चरक ने लिखा है कि रज के बन्द होने पर स्त्री शरीर पर तेल लगाकर शिर सहित स्नान करे और सुन्दर, स्वच्छ वस्त्र पहन कर फूलमाला आदि स्त्री–पुरूष दोनों धारण करें जिससे उनको सन्तानोत्पत्ति की इच्छा मानसिक हर्ष प्रकट हो।[24]

सुश्रुतकार भी कहते हैं कि चौथे दिन शुद्धस्नान, नवीन वस्त्रयुक्त, (आभूषणों से तथा पुष्पों की मालाओं से) समलंकृत, मंगलाचरण और स्वस्तिवाचन किये हुए (उस स्त्री) को पति को दिखावे।[25] क्योंकि ऋतुस्नाता स्त्री जिस प्रकार के पुरूष को प्रथम देखती है, उस प्रकार के अपत्य को जन्म देती है। इसलिए अर्थात् उपाध्याय या वैद्य घर के लोगों को इस प्रकार की सूचना दे कि स्नान होने के पश्चात् स्त्री को सर्वप्रथम पति का दर्शन करावे।[26]

पति के अनुसार सन्तान होने में एक प्रकार का औचित्य है, इसलिए स्त्री को उसी का दर्शन प्रथम कराने के लिए लिखा है। परंतु केवल दर्शन से काम नहीं होता है, दर्शन के समय अनन्य मन होकर जब उसी का चिंतन किया जाता है, तब चिंतनानुरूप सन्तान हो सकती है।[27] अर्थात् जब एतिसदृश सन्तान की इच्छा हो, तब पतिदर्शन की औपचारिक विधि आवश्यक है।[28] पुत्र से यहाँ केवल सन्तान का ही अर्थ होता है।[29] परंतु पति के समान पुत्र होने में सार्थकता नहीं है, उत्तम पुत्र होने में सार्थकता है। इसलिए चरकसंहिता में पतिदर्शन की विधि का निर्देश नहीं किया है और जिस प्रकार के पुत्र की इच्छा हो, उस प्रकार के रूप–चरितादि का चिन्तन करने के लिए लिखा है।[30]

जिस प्रकार की संतान चाहती है, उस प्रकार के पुरूष का आहार–विहार सेवन करने के लिए चरक में लिखा है।[31] साथ ही सायं प्रातः श्वेत वर्ण के बड़े बैल को तथा चन्दन चर्चित सफेद अश्व को देखा करे।[32] और वैसे ही दृश्यों को देखे और कथाओं को सुने पुरूष भी इन आठ दिन में वैसे ही शुभ आचरण करे। अपने मन को सब प्रकार वस्तुओं से पसन्न और पवित्र रखें। इसी प्रकार पुरूष भी मन को प्रसन्न रखने के लिये यथावत् आचरण करे तथा दोनों सुन्दर दैवी वस्तुओं (प्राकृतिक दृश्यों) को देखा करें। स्त्री की अन्य सहचारिणियाँ भी उससे हित और प्रेम की बात करें।[33]

गर्भाधान के समय में तथा उसके पश्चात् सगर्भावस्था में स्त्री जिस वर्ण के बालक का मन से चिन्तन करती है, उस चिन्तन का प्रभाव बालक के रंग पर होता है। जीववैज्ञानिको के अनुसार रक्त में पीगमेंट पाया जाता है, जो शरीर के स्वाभाविक वर्ण त्वचागत मेल्यानिन (Melanin) नामक रंगद्रव्य की न्यूनाधिकता के अनुसार हुआ करते हैं। जो संतान के रंग निर्धारित करता है। यह कुछ हद तक रहन–सहन के स्थान पर निर्भर करता है।

कबूतर से जिस रंग की कबूतर पैदा करना चाहें, उस रंग की दीवारें पुता देनी चाहिये। उस घर में सब जगह, ऊपर, नीचे, चारों ओर वही रंग होना चाहिये। इससे जब जोड़ा मिलता है, तब उनपर वही रंग असर करता है। नर और मादा को भी उसी रंग में रंग दिया जावे, तो उत्तम है। उत्तम अच्छी नस्ल का घोड़ा पैदा करनेवाले रंग की कीमत को जानते हैं। पशुओं में रंग का महत्त्व उनकी कीमत में रहता है, इसलिये बच्चा लेते समय वे इन बातों को ठीक बरतते हैं।

इसी तथ्य के आधार पर सौदागर जिस रंग का घोड़ी से बच्चा चाहते हैं, उसी रंग का घोड़ा घोड़ी के सामने गर्भाधान के समय खड़ा करते हैं और घोड़ी की आँखों में पट्टी बाँध देते हैं। जब घोड़े से गर्भाधान हो चुकता है, तब आँखों की पट्टी खोल देते हैं। पट्टी खोलने से घोड़ी की नजर सामने वाले घोड़े पर पड़ती है और उसी रंग का बच्चा प्रायः होता है। सूत्र एक यही है कि–गर्भाधान के समय जैसा रंग आँख के सामने या मन में रहेगा, उसी रंग का बच्चा उतरेगा। मनुष्यों में भी इसी प्रकार चिन्तन का प्रभाव बच्चों पर कभी कभी होता है। कृष्णवर्ण स्त्री–पुरूषों की गौरवर्ण संतान और गौरवर्ण स्त्री–पुरूषों की कृष्णवर्ण संतान की उत्पत्ति का समर्थन इसी तत्त्व पर हो सकता है। इस विषय में यूरोपियन की एक आख्यायिका प्रसिद्ध है। एक यूरोपियन दम्पती के यहाँ काले रंग की सन्तान हुई। कारण यह साबित हुआ कि गर्भाधान के समय स्त्री की दृष्टि शयन कक्ष में टंगे हुए एक काले रंग के हबसी खेलाड़ी के चित्र पर पडती थी। पशु–पक्षि में मन, बुद्धि बहुत उन्नत नहीं होते। उसलिये उनमें तो गर्भाधान के समय आँखों के सामने आये रंग का बच्चा आता है; पुरूषों में मन का भी सहयोग आवश्यक है। यह अवचेतन मन में स्थित हो जाना चाहिए ताकि इच्छित संतान अवश्य प्राप्त हो। आयुर्वेद में भी लिखा है कि स्त्री जिस–जिस प्रकार के पुत्र की इच्छा करे, उस–उस प्रकार की संतानवाले जनपदों का स्त्री मन से चिन्तन करे।[34] उन उन जनपदों की बातें सुनें, मन को उधर लगाये, वहाँ घुमाये। वे लोग जैसा आहार–विहार करते हों, जैसे वस्त्र पहिनते हों, जैसा उनका रहन–सहन हो; वैसा वह भी करे। इस प्रकार करने से इच्छित पुत्र उत्पन्न होता है।

स्त्री जिस पदार्थ अथवा दृश्य को मन में बसा लेती है। उसकी जैसी आकृति होती है उसी प्रकार की वह सन्तान उत्पन्न करती है। सन्तान को विशेष रीति पर शुद्ध उत्पन्न करने के लिये आवश्यक है कि स्त्रियों की (अपवित्र वातावरण, दुस्वस्था और अस्वास्थ्यकर स्थिति से) रक्षा करने में पूर्ण प्रयत्न किया जाय।[35] गर्भावस्था में माता के खान–पान का, रहन–सहन का और आचार–विचार का एक–एक शब्द या दृश्य जो उसकी कान या आँख में आता है। जिससे जो संकल्प मन में उठता है; उसका प्रभाव पड़ता है।

अभिघातों के कारण गर्भिणी का जो–जो भाग (अंग) पीड़ित होता है, उस गर्भस्थ बालक का वही–वही भाग पीड़ित हो जाया करता है।[36] व्यायाम व्यवायादि पूर्वोक्त निषिद्ध आहार–विहार रूप दोषों के अभिघातों से या निषिद्ध आहार–विहार के कारण प्रकुपित वातादि दोषों के अभिघातों या आहार–विहार दोष और पतन प्रहारादि अभिघात निज और आगन्तु कारणों से माता के जिस अंग में विकार होता है, गर्भस्थ शिशु के उसी अंग में विकार होता है। माता के शारीरिक और मानसिक दोषों का बुरा असर गर्भस्थ शिशु पर होता है।[37] जिन बातों का गर्भिणी के मन पर प्रभाव पहुँचता है उसी प्रकार के विचारों के संस्कार लेकर सन्तान उत्पन्न होती है। जैसे यदि माता डरती रही है तो संतान अवश्य डरपोक उत्पन्न होगी, विस्तार भय से हम अन्य पश्चिमी डाक्टरों के प्रमाण नहीं दे सकते। लुईकून, निकिल्सन आदि अनेक डाक्टर इसी बात की पुष्टि करते हैं।

महर्षि धन्वन्तरि कहते हैं–जिस गर्भिणी का दौर्हृद (मन) राजा के दर्शन में होता है तब उरके यहाँ धनवान् बड़े भाग्यवाला पुत्र होता है।[38] अच्छे अच्छे उत्तम वस्त्र तथा आभूषणों में दौर्हृद (मन) होने से आभूषणों की इच्छा करने वाला उत्सुक बच्चा उत्पन्न होता है।[39] जो स्त्रियाँ विद्वान् और ब्राह्मणों का संत्संग करने वाली हैं, जो पवित्रता और सदाचार से रहने वाली हैं उनकी सन्तान महागुणवान् होती है, यदि इनसे विपरीत आचरण वाली होंगी तो सन्तान भी सद्गुण–शून्य (साधारण) ही होगी।[40] इसलिए ब्रह्मज्ञानी योगी के कुल में कोई ऐसा पुरूष जन्म नहीं लेता, जो ब्रह्मवित् न हो। ब्रह्मवित् माता–पिता के शरीर से ऐसे शरीर बनने की सम्भावना नहीं है, जिसमें अब्रह्मवित् जीव रह सके।[41]

जिस का मन योगियों, यतियों के आश्रम में हो उसके धर्मशील बालक उत्पन्न होता है और जिसका मन महापुरूषों के चित्र में हो उनके यहाँ वैसा ही बालक जन्म लेता है।[42] इनके अतिरिक्त जो नहीं कहे हैं उन असंख्यात पदार्थों पर यदि गर्भिणी का मन होवे तो उनके शरीर, आचार और शील के समान ही बालक उत्पन्न होते हैं।[43] कर्म की जिस प्रकार प्रेरणा होती है उसके अनुकूल ही होनहार होता है और दैवयोग से उसी अनुकूल ही गर्भिणी स्त्री के मन में इच्छायें उत्पन्न होती हैं। जैसे कोई प्राणी दुःखदायी उत्पन्न होगा तो उसकी माता का मन दौर्हृदकाल में सर्प आदि दुःखदायी जीवधारियों के देखने को चाहेगा।[44] अगं–प्रत्यगं का उत्पन्न होना वह स्वभाव से ही होता है, परंतु इस अंग प्रत्यंग की उत्पत्ति में जो जो गुण–दोष होते हैं वे उस गर्भ के धर्माधर्म पर निर्भर हैं, अर्थात् गर्भ पुण्यात्मा होगा तो शरीर

की बनावट उत्तम श्रेणी की होगी यदि अधर्मी होगा तो लंगड़ा, अन्धा, विकृत अंग वाला उत्पन्न होगा।[45]

यजुर्वेद में कहा गया है कि जो स्त्री–पुरूष सदाचारी रहेंगे उन्हीं के धर्मात्मा सन्तान पैदा होगी।[46] वेद के इस भाव की व्याख्या अनेक ग्रन्थों में अनेक प्रकार से वर्णित है। महर्षि हारित भी वेदानुसार ही कहता है कि विधिवत् गर्भाधान से पत्नी के गर्भ में भगवत्तत्त्व में आस्थान्वित वेदार्थ के अनुशीलन में अभिरूचि सम्पन्न जीव का प्रवेश होता है और गर्भाधान आदि ब्राह्म संस्कारों से संस्कृत व्यक्ति ऋषियों के सामान पूज्य तथा ऋषि तुल्य हो जाता है। वह ऋषि लोक में निवास करता है तथा ऋषियों के समान शरीर प्राप्त करता है और पुनः सुसंस्कारों से सुसंस्कृत होकर वह देवताओं के सामन पूज्य होता है।[47] देवता ब्रह्म परायण, (शास्त्र) शुद्ध और हितकर आचार में रत माता–पिता गुणवान् संतान को जन्म देते हैं और विपरीत आचारयुक्त गुणहीन संतान को उत्पन्न करते हैं।।[48]

गर्भाधान के समय आहार व्यवहार चेष्टा जैसा होता है वैसा ही संतान होता है। रज–वीर्य के मिश्रण–काल में माता–पिता के मन में जैसे भाव होते हैं, वे ही भाव पूर्व–कर्म के फल का समन्वय करते हुए गर्भस्थ बालक में प्रकट होते हैं।'[49] इसलिए जैसी सन्तान पैदा करनी वैसे भावना बनाने चाहिए ब्राह्मण धर्मात्मा सन्तान पैदा करनी हो तो स्त्री पुरूष को कुछ काल पूर्व ब्रह्मचर्य रूपेण रहते हुए, वैसे भावना बनाने चाहिए और क्षत्रिय वैश्य सन्तति पैदा करनी हो तो वैसे विचार उत्पन्न करने चाहिएँ। नारदपुराण में कहा गया है कि 'जिस भाव से योनि में वीर्य डाला जाता है, उसी भाव से युक्त संतान होती है। इसलिये मनुष्य को गर्भाधान करते समय जैसे सुपुत्र की इच्छा हो, वैसे शुभभाव से युक्त होना चाहिये। पुराणों में तो इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं।[50] बृहदारण्यकोपनिषद् का निर्देश है कि स्त्री–पुरूष जिस भाव से सहवास करते हैं, जैसा आहार–विहार करते हैं, गर्भ पर वैसा ही प्रभाव पड़ता है।[51] अतएव गर्भाधान से पूर्व उत्तम गर्भ के लिये प्रार्थना की जाती है। आधुनिक विज्ञान भी इस संस्कार के मनोवैज्ञानिकता को स्वीकारता है। गर्भकालीन भावना का संतान पर प्रभाव पड़ता है, इसमें इसमें लौकिक एवं शास्त्रोक्त प्रमाण सर्वदा देखने को मिलता है।

एक ऋतुमति स्त्री ने दुर्धटनाग्रस्त गाड़ी से एक व्यक्ति का शिर कुचला हुआ देखी, जिसके कारण वैसा ही शिर कुचला लोथरा सा मृत संतान हुआ।

एक ब्राह्मण स्त्री ने ऋतु–स्नान के बाद एक दुष्ट प्रकृति के पठान को अचानक देख लिया था, इससे उसका वह बालक ब्राह्मणों के आचरण से हीन पठान–प्रकृति का हुआ।

महर्षि कश्यप और दिति से हिरण्याक्ष और हिरण्यकश्यपु दो राक्षस पुत्रों का जन्म हुआ और पिता राक्षसराज हिरण्यकश्यपु से गर्भवती माता कयाधु पर नारद मुनी के वचनों का ऐसा प्रभाव पड़ा कि पुत्र विष्णु भक्त प्रहलाद का जन्म हुआ।[52]

महाभारत, शान्ति पर्व में बताया है कि जब माता–पिता सदाचार और हिताचार के अनुसार व्यवहार करते हैं, तब उनके संतान बीजांकुरन्यायेन सब दृष्टि से गुणवान् होते हैं।[53] विद्वान् ब्राह्मणों का सत्सङ्ग करने वाली तथा शारीरिक मानसिक पवित्रता के साथ सदाचार से युक्त रहने वाली गर्भिणी स्त्री को उत्तम गुणवान् सन्तान की प्राप्ति होती है इससे विपरीत आचरण वाली के सामान्य सद्गुणशून्य सन्तान होती है।

महाभारत में गर्भधान के समय माता के आँखें बंद करने, प्रसन्नता और भय के प्रभाव को बताया है। सत्यवती ने बड़ी पुत्रवधू कौशल्या को समझा कर कहा–देवी तेरा देवर रात को तेरे घर आएगा, तुम सावधान रहना।[54] ऋतुस्नान से शुद्ध हुई, अम्बिका के शयन भवन में, अर्धरात्रि को व्यास जी गये, वह तेजस्वी के तेज को न सहकर सावधान न रह सकी, और आँख बंद कर ली यद्यपि मन से बुद्धिमान् पुरूषों का चिन्तन करती रही। आयुर्वेदादि के ज्ञाता ऋषि को जब माता ने वृत्तान्त पूछा तो ऋषि ने कहा–पुत्र बड़ा भाग्यवान् बलवान्, तथा बुद्धिमान् होगा, पर माता के भय से आँख बन्द करने से अन्धा होगा।[55] तब सत्यवती ने कहा, पुत्र! अन्धा, कुरूओं का राजा नहीं हो सकता, दूसरा पुत्र (राजा) कुरूवंश को दो।

फिर अर्धरात्रि को व्यास जी गये, तब अम्बे ने छल से दासी को भेज दी, वह दासी गर्भाधान के समय प्रसन्नता से रही और मन से बुद्धिमान् पुरूषों का चिन्तन करती रही। आयुर्वेदादि के ज्ञाता ऋषि को जब माता ने वृत्तान्त पूछा तो ऋषि ने कहा–पुत्र बहुत बड़ा धर्मात्मा, तथा सबसे बुद्धिमान् होगा, पर वह दासी पुत्र होगा।[56] फिर माता सत्यवती बोली पुत्र! दासी पुत्र, कुरूओं का राजा नहीं हो सकता, दूसरा पुत्र (राजा) कुरूवंश को दो।

तब फिर अम्बे के शयन भवन में अर्धरात्रि को व्यास जी गये, तब उस तेजस्वी को देख कर उसका होश उड़ गया अर्थात् उसका शरीर भय से पीला पड़ गया। यद्यपि मन से बुद्धिमान् पुरूषों का चिन्तन करती रही। जब माता ने वृत्तान्त पूछा तो ऋषि ने कहा–पुत्र बड़ा भाग्यवान् बलवान्, तथा बुद्धिमान् होगा, पर माता के विरूपता (डर) से शरीर पीला हो जाने के कारण पीलिया (जोंडिस) रोगी होगा।[57] इत्यादि अनेक प्रमाण मौजूद हैं जो साबित करते हैं कि गर्भाधान से ही माता अपने बच्चे को अपने आचार विचार से मनोनुकूल संतान बनाती है।

आर्किटेक्ट जिस तरह की इमारत बनाना चाहते हैं, पहले उसकी तस्वीर देखते हैं। वे उसे इस तरह देखते हैं; जिस तरह वे उसे पूरा देखना चाहते हैं। उनकी कल्पना और विचार–प्रक्रिया एक प्लास्टिक का साँचा बन जाती है, जिससे इमारत उभरेगी। यह सुंदर या बदसूरत हो सकती है, गंगनचुंबी अट्टालिका या एक मंजिला मकान हो सकती है, लेकिन यह सब तस्वीर की कल्पना से शुरू होता है। आर्किटेक्ट की मानसिक तस्वीर कागज पर आकार लेती है। अंततः कॉन्ट्रैक्टर और भवन–निर्माता आवश्यक सामग्री इकट्ठी करते हैं और इमारत बनने लगती है। पुरी होने पर यह आर्किटेक्ट के मानसिक ढाँचे के अनुरूप होती है। संसार के सभी कार्य (आविष्कार) सबसे पहले मन से ही होता है।

जैसी धार्मिक, शूर, विद्वान्, तेजस्वी संतान चाहिये, वैसा ही भाव रखना चाहिये; और ऋतुस्नान के बाद से प्रतिदिन वैसी ही वस्तुओं देखना और चिन्तन करना चाहिये। जो भी जैसा मन से ध्यान करेगा, जैसा सोचेगा वैसा ही बन जायेगा।[58] व्यक्ति जो चाहता है, वैसा ही बन जाता है।[59] एकाग्रचित्त से मनुष्य जिस वस्तु की कामना करता है वह वस्तु संकल्प मात्र से ही उसे प्राप्त होती है।[60] शुद्ध शरीर एवं पवित्र आत्मा से किसी वस्तु का चिन्तन करने को ध्यान कहते हैं। ध्यान करने से मनुष्य ध्यान की वस्तु में स्वयं परिवर्तित हो जाता है। कहा जाता है कि भृंगी नामक कीड़े स्वयं न तो अण्ड़ा और न बच्चा देती है। वह दूसरे कीड़े को पकड़ कर लाती है और अपनी मिट्टी के बने हुए रहने की जगह पर रख कर उसे डंसती है। एक बार ही डंस कर स्वयं बाहर निकल जाती है। कीड़ा यह सोचता है कि भृंगी फिर आयेगा मुझे डसेगा मुझे मारकर खा जायेगा। अगर मैं भी भृंगी हो जाता तो कितना अच्छा होता और इधर भृंगी सोचता है कि अब से मेरी संतान है मेरे अनुरूप हो गया है। इसी तरह के ध्यान, चिन्तन एवं सोच से कीड़ा भृगी बन जाता है। कौआ भी अपने अण्ड़े को ध्यान से ही सेवता (संतान बनाता) है।

क्रोध शोकादि अवस्थाओं का बुरा प्रभाव उसके शरीर पर जल्द होकर गर्भगत शिशु पर भी होता है; इसलिए इन मानसिक विकारों से गर्भवती स्त्री दूर रहे। गर्भिणी स्त्री ऐसे कर्म न करे, ऐसी बातें न सुने न करे, ऐसे दृश्य न देखे जिससे उसके चित्त में शोक, क्रोध असूया, ईर्ष्या, भय, उद्वेग, त्रास, चित्तसंक्षोभ इत्यादि विकार उत्पन्न हो जायँ।[61] एक गर्भवती को सभी चिंताओं और उत्तेजनाओं से जितना संभव हो उतना बचा जाना चाहिए। कभी भी डरावनी कहानी या विचार नहीं कहनी चाहिए और कठिन

परिश्रम से बचना चाहिए। सदमे और भय से रक्त की एड्रेनालाईन अचानक परिवर्तन हो जाता है। [62]

गर्भाधान एवं गर्भावस्था में माता जैसी सात्त्विक–राजस–तामस भावना से भावित रहती है, जैसा अच्छा–बुरा देखती, सुनती, पढ़ती, खाती–पीती है, उन सबका गर्भ में स्थित संतान पर प्रभाव पड़ता है। इसलिये स्त्री को राजस–तामस भावों से बचकर सात्त्विक भावनाएँ रखनी चाहिये। गंदे सिनेमा–टेलीविजन–पोस्टर न देखकर सात्त्विक देवदर्शन, संतदर्शन आदि ही करना चाहिये। गंदे गीत सुनना–गाना छोड़कर सात्त्विक भजन–कीर्तन ही सुनना–गाना चाहिये। गंदे उपन्यास पढ़ना–सुनना–सुनाना छोड़कर सात्त्विक रामायण, भागवत आदि ग्रन्थ ही पढ़ना–सुनना–सुनाना चाहिये। गर्भकालीन भावना का संतान पर प्रभाव पड़ता है।

निवास या शयन कक्ष में अभीष्ट गुणवर्धक आदर्श महान पुरूषों (राम, कृष्ण सीता, सावित्री आदि एवं प्राकृतिक दृश्यों के चित्र एवं प्रेरणाप्रद शिक्षायें देने वाले आदर्श वाक्य टँगे रहने चाहिए। इन पर बार–बार दृष्टि जायेगी तो तत्सम्बन्धित विचार मन में उठेंगे। यह भी एक प्रकार का शिक्षण ही है। एक पूरानी कहावत है। एक तस्वीर सौ वाक्यों के बराबर है। इनका भी बालक की मनोभूमि पर बड़ा प्रभाव पड़ता है।[63]

गर्भाधान की क्रिया के समय माता–पिता की शारीरिक तथा मानसिक स्थिति जैसी शुद्ध और पवित्र होगी, बालक का शरीर और मन भी वैसा ही बनेगा। अतः गर्भाधान के समय माता–पिता के मन स्वस्थ एवं धर्मान्वित होना अत्यन्त आवश्यक है। गर्भाधान के समय शुद्ध सात्त्विक विचार होने चाहिये।[64] जब संतान माँ के गर्भ में आता है, तभी से माँ अपने सत्संकल्पों से बालक के संस्कारों की रचना करने लग जाती है। जिस प्रकार के आहार, आचार और चेष्टाओं से युक्त होकर स्त्री और पुरूष समागम करते हैं, उस प्रकार की सन्तान उनसे होती है।[65] इस काल में स्त्री और पुरूष का जिस प्रकार का आहार होगा, विहार होगा या मानसिक स्वास्थ्य होगा, उसी के अनुसार अपत्य भी स्वस्थ या अस्वस्थ, सबल या निर्बल, आनंदी या दुःखी, चंचल या स्थिर हो जायगा। इसलिए जिस प्रकार के अपत्य की इच्छा हो, उस प्रकार के अपत्य के लिए उचित आहार, विहार, आचार, विचार, चिन्तन इत्यादि शरीरिक और मानसिक कर्म स्त्री और पुरूष दोनों को ही करने चाहिए। [66] इसलिए यह ऐसी आशावादी नई पीढ़ी, जो भविष्य में बेहतरीन मनुष्य जाति के रूप में उभर सके, की नींव तैयार करती है। गर्भाधान संस्कार ही हमारी अविच्छिन्न सांस्कृतिक परम्परा के प्राण हैं। अतः हमें गर्भाधान संस्कार का विशेष रूप से अनुशीलन कर व्यवहारिक रूप देना चाहिये।

निष्कर्ष–

जब मन प्रसन्न हो, आनंद में हों, जब प्रेम में हो, जब प्रफुल्लित हों और जब प्राण 'प्रेयरफुल' हों। जब ऐसा मालूम पड़े कि आज हृदय शांति से और आनंद से कृतज्ञता से भरा हुआ है, तभी क्षण है, तभी क्षण है संभोग के निकट जाने का। और वैसा व्यक्ति संभोग में अध्यात्मिक तल की संतान को प्राप्त करता है। मिलन जितना आध्यात्मिक होगा, जो संतति पैदा होगी, वह उतनी ही अद्भुत होगी। मिलन जितना शारीरिक होगा, जो संतति पैदा होगी वह उतनी ही कचरा और दलित होगी।

एक पवित्रता की भाव दशा चाहिए संभोग के पास जाते समय। वैसी भाव दशा जैसे कोई मंदिर के पास जाता है, क्योंकि संभोग के क्षण में हम परमात्मा के निकटतम होते हैं, इसीलिए तो संभोग में परमात्मा सृजन का काम करता है और नए जीवन को जन्म देता है। हम क्रिएटर के निकटतम होते हैं। संभोग की स्थिति में हम स्रष्टा के निकटतम होते हैं। इसीलिए तो हम मार्ग बन जाते हैं और एक नया जीवन हमसे उतरता है और गतिमान हो जाता है। हम जन्मदाता बन जाते हैं। लेकिन स्मरण रखें कि जब आप दुःख में जाएंगे, चिंता में जाएंगे उदास, हारे हुए, क्रोध में, लड़े हुए जाएंगे, तब आप कभी भी सेक्स की उस गहरी अनुभूति को उपलब्ध नहीं कर पाएंगे, जिसकी कि प्राणों में प्यास है। उस अध्यात्मिक तल की संतान वहाँ नहीं मिलेगी।

इसके लिए प्रार्थना चिकित्सा (Prayer Therapy), प्रार्थना का जीववैज्ञानिक रहस्य, मानसिक चित्र विधि (MENTAL MOVIE METHOD) जीवात्मा का आवाहन को जानेंगे तो और अधिक गर्भधान संस्कार की मनोवैज्ञानिकता को समझ पायेंगे

संदर्भ सूची–

1. अथास्यास्यमितर आत्मा कृत कृत्यों वयोगत प्रति स इतः प्रयन्नेव पुर्नजायते'' ऐतेरियोपनिषद् आत्मा जब शरीर रोग ग्रस्त या जीर्ण–शीर्ण होने पर आत्मा उस शरीर के विचारानुकूल योनियों की ओर प्राण ग्रहण करने के लिए दौड़ता है।
2. ''यं यं लोकं मनसा संविभाति विशुद्धसत्त्वः कामयते यांश्च कामान्। तं तं लोकं जायते तांश्च कामाँस्तस्मादात्माँ ह्यर्च्चयेद्भूतिकामः।। मुण्डकोपनिषद् 03/01/10 निर्मल बुद्धि वाला पुरूष जिस–जिस लोक (योनि) को मन से चिन्ता करता है और जिन भोगों को (वासना के वशीभूत होकर) चाहता है, उस–उस लोक और उस–उस भोगों को प्राप्त करता है। इसलिए सिद्धि का इच्छुक आत्मवित् पुरूष की पूजा करें।
3. बृहदारण्यक उपनिषद् ४/४/५ पुरूष कामनामय है, जैसी कामना करता है, उसी के अनुसार संकल्प होता है, जैसा संकल्प होता है, वैसा ही कर्म का अनुष्ठान करता है, कर्म के अनुसार ही फिर फलों को भोगता है।
4. कामान् यः कामयते मन्यमानः स कामभिर्जायते तत्र तत्र। मुण्डकोपनिषद् ३/२/२ कामनाओं को ही मानता हुआ जो–जो इच्छा करता है, वह इच्छाओं के फलस्वरूप उस उस योनि में ही जाता है। लोकोक्ति भी इस में प्रमाण है–''अन्तमता सो गता'' अर्थात् अन्त में जैसी मति होती है, उसी के अनुकूल गति होती है।
5. तस्मादहितानाहारविहारान् प्रजासम्पदमिच्छन्ती स्त्री विशेषेण वर्जयेत्। साध्वाचारा चात्मानमुपचरेद्धिताभ्यामाहारविहाराभ्यामिति। ;चरक; प्रथमखण्ड पृष्ठ १५१
6. आहाराचारचेष्टाभिर्यादृशीभिः समन्वितौ। स्त्रीपुंसौ समुपेयातां तयोः पुत्रोऽपि तादृशः।। ;सुश्रुतसंहिता, शारीरस्थान २/४६/५0
7. जाकी रहि भावना जैसी, प्रभु मुरत देखै तिंह तैसी।; रामचरितमानस; गोस्वामी तुलसीदास
8. न देवो विद्यते काष्टे न पाषाणे न मृण्मये। भावेहि विद्यते देवस्तस्मात् भावोहि कारणम्।।
9. मंत्रे तीर्थे द्विजे दैवज्ञे भेषजे गुरौ। यादृशीर्भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशीः।। मंत्र में, तीर्थ में, ब्राह्मण में, देव में,ज्योतिष में, औषधि में और गुरू में जिसकी जैसी भावना होती है उसको वैसी ही सिद्धि होती है। कमोदनी जलहरि बसै, चंदा बसै अकासि। जो जाही का भावता, सो ताही कै पास।।
10. Thought is the stuff out of which things are made. स्वेटमार्डन की उक्ति
11. We built our future thought by thought or good or bad as know it not'. स्वेटमार्डन की उक्ति
12. Control your thoughts and you control your destiny. स्वेटमार्डन
13. 'यादृगिच्छेच्च भवितुं, तादृग्भवति पुरूषः।; विदुरनीति; महात्मा विदुर कृत की उक्ति
14. महान रोमन दार्शनिक मार्क्सऑरेलियस की उक्ति

15. उन्नीसवी सदी के अग्रणी अमेरिकी दार्शनिक राल्फ वाल्डो इमर्सन की उक्ति
16. Empowermrnt Through Reiki प्रोफेसर पॉल सी हॉरेन (मनोविज्ञान) पी0 एच्0 डी0, रॉकपोर्ट, वाशिंगटन ; अध्याय १६ शरीर–मनोविज्ञान भावनाओं का संग्रह कहाँ–कैसे ?; पृष्ट–१३५
17. मन की अद्भुत शक्तियाँ, स्वरूप एवं सम्मोहन; लेखक–डॉ0 रघुवीर वेदालंकार; पृष्ठ–४
18. स्वामीज्ञानाश्रमजी कृत संकल्प–सिद्वि; पाठ–स्वास्थ्य पर विचारों का प्रभाव; पृष्ट–१0१; प्रकाशक–दुर्गाशंकर नागर; कल्पवृक्ष–कयाकल्प; उज्जैन
19. 'अकामस्य क्रिया काचिद्, दृश्यते नेह कर्हिचित्।'; मनुस्मृति
20. अंगादंगात्सम्भवसि, ह्रदयादभिजायसे। आत्मा वै पुत्र नामासि स जीव शरदः शतम्।। पाररस्कर गृह्यसूत्र;१/१८/२–''हे शिशु! तू मेरे अंग–अंग के सार से पैदा हुआ है; ह्रदय से प्रकट हुआ है। मेरा आत्मा ही पुत्र नामवाला है। वह जीव सौ वर्ष तक जीये''
21. देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः।। हरिवंशपुराण
22. यन्मनसा ध्यायति तद्वाचा वदति, यद्वाचा वदति तत्कर्मणा करोति, यत्कर्मणा करोति तदभिसम्पद्यते।; शतपथ ब्राह्मण
23. सुश्रुतसंहिता; शरीरस्थानम्; दशमोऽध्याय।
24. चरक; शरीरस्थान; अष्टमोऽध्याय; सूत्र–88।
25. ततः शुद्धस्नातां चतुर्थेऽहन्यहतवासां समलंकृतां कृतमंगलस्वास्तिवाचनां भर्तारं दर्शयेत्। तत् कस्य हेतोः?।।२६।।; सुश्रुत; शरीरस्थानम् ; तृतीयोध्याय; सूत्र–२६; पृष्ट–३१
26. उपाध्यायौ वैद्यो वा इति शेषः। पूर्वे पश्येदृतुस्नाता यादृशं नरमंगना। तादृशं जनयेत् पुत्रं भर्तारं दर्शयेतः।।; सुश्रुत; शरीरस्थानम्; तृतीयोध्याय; सूत्र–२७; पृष्ट–३१
27. भर्तारं पश्येदनन्यमनाः। तदा हि यादृशमेव पश्यति चिन्तयति वा तादृशं प्रसूत इति। अष्टांगसंग्रह
28. इच्छन्ती भर्तृसदृशं पुत्रं पश्येत् पुरः पतिम्।–अष्टांगहृदय
29. पुत्रशब्दोऽपत्यमात्रोपलक्षणार्थोऽत्र।–अरूणदत्त
30. इच्छेतां यादृशं पुत्रं तद्रूपचरितांश्च तौ। चिन्तयेतां जनपदांस्तदाचारपरिच्छदौ।। (अष्टांगहृदय)।
31. या या च यथाविधं पुत्रमाशासीत तस्यास्तस्यास्तां तां पुत्राशिषमनुनिशम्य तां तां जनपदान् मनसाऽनुपरिक्रामयेत्। ततो या या येषां येषां जनपदानां मनुष्याणामनुरूपं पुत्रमाशासीत सा सा तेषां तेषां जनपदानां मनुष्याणामाहारविहारोपचारपरिच्छदाननुविधत्स्वेति वाच्या स्यात्।; सुश्रुत; शरीरस्थानम् ८/१४।
32. सायं प्रातश्च श्वेत् श्वेतं महान्तं वृषभाभाजनेयं वा हरिचन्दनांददं पश्येत्'। चरक संहिता; शरीरस्थान; अष्टमोऽध्याय;
33. चरक; सूत्र १४–१६तक; पृष्ट–१६६,
34. इच्छेता यादृशं पुत्रं तद्रपचरितांश्च तौ। चिन्तयेतां जनपदांस्तदाचारपरिच्छदौ।। ;अष्टांगहृदय ।
35. या दृशं भजते हि स्त्री सुत सूते तथाविधम्। तस्मात्प्रजाविशुद्ध्यर्थं स्त्रियं रक्षेत्प्रयत्नतः।।; मनुस्मृति; अध्याय–६; श्लोक–६
36. दोषाभिघातैर्गर्भिण्या यो यो भागः प्रपीडयते। स स भागः शिशोस्तस्य गर्भस्थस्य प्रपीडयते।।; सुश्रुत; शरीरस्थानम्; अध्याय–३; सूत्र–१७; पृष्ट–८८
37. माता च गर्भे प्रधानं कारणं, येन आसेकात् प्रभृति प्रसवपर्यन्तं मातुरेव गुणादोषावनुविदधाति गर्भ। (चक्रपाणिदत्त)।
38. राजसंदर्शने यस्या दौर्हृदं जायते स्त्रियाः। अर्थवन्त महाभागं कुमारं सा प्रसूयते।। ; सुश्रुत ; सूत्रस्थान; अध्याय–३; सूत्र–२५
39. अलंकारैषिणं पुत्रं ललितं सा प्रसूयते।।; सुश्रुत ; सूत्रस्थान; अध्याय–३; सूत्र–२६
40. देवताब्राह्मणपराः शौचाचारहिते रताः। महागुणान् प्रसूयन्ते विपरीतास्तु निर्गुणान्।।; सुश्रुत; शरीरस्थान; अध्याय–3; सूत्र–५१
41. 'नास्याब्रह्मवित्कुलेभवति य एवं वेद'; माण्डूक्य उपनिषद्।१0।
42. आश्रमे संयतात्भानं धर्मशील प्रसूयते। देवताप्रतिमायां तु प्रसूते पार्षदोषमम्।।; सुश्रुत ; सूत्रस्थान; अध्याय–३; सूत्र–२७
43. अतोऽनुक्तेषु या नारी समभिध्याति।।; सुश्रुत ; सूत्रस्थान; अध्याय–३; सूत्र–३७
44. कर्मणा चोदितं जंतोर्भवितव्यं पुनर्भवेत्। यथा तथा दैवयोगाद्दौर्हृदं जनयेद्ध्रवम्।। ; सुश्रुत ; सूत्रस्थान; अध्याय–३; सूत्र–३८
45. अंगप्रत्यंगनिर्वृत्तिः स्वभावादेव जनयते। अंगप्रत्यंगनिर्वृत्तौ ये भवन्ति गुणागुणाः। ते ते गर्भस्य विज्ञेया धमोधर्मनिमित्तजाः।।; सुश्रुत; सूत्रस्थान; अध्याय–३; सूत्र–४२
46. विवस्वन्नादित्यैष ते सोमपथिस्तस्मिन् मत्वस्व। श्रदस्मै नरो वच मे दधातन यदाशीर्दा दम्पती वाममश्नुतः। पुमान् पुत्रो जायते विन्दते वस्व धा विश्वाहास्य एधते गृहे।; यजुर्वेद ८५
47. ''ब्राह्म संस्कार संस्कृतः ऋषीणां समानतां सामान्यतां समानलोकतां सायोज्यतां गच्छति। दैवेनोत्तरेण संस्कारेणानुसंस्कृतो देवानां समानतां सामान्यतां समानलोकतां सायोज्यतां च गच्छति।''; महर्षि हारीत स्मृति
48. देवता ब्राह्मणपराः शौचाचारहिते रताः। महागुणान् प्रसूयन्ते विपरीतास्तु निर्गुणान्।।; सुश्रूत; श्लोक–४५
49. आहाराचारचेष्टाभिर्यादृशीभिः समन्वितौ। स्त्रीपुंसौ समुपेयातां तयोः पुत्रोऽपि तादृशः।।; सुश्रुतसंहिता; शारीरस्थान; अध्याय–2; श्लोक–46
50. यादृशेन हि भावेन योनौ शुक्रं समुत्सृजेत्। तादृशेन हि भावेन संतानं सम्भवेदिति।।; नारदपुराण २।२७।२६–३0.
51. बृहदारण्यकोपनिषद् ;६/४/२१
52. अप्रायत्यादात्मनस्ते दोषान्मौहूर्तिकादुत। मन्निदेशातिचारेण देवानां चातिहेलनात्।। भविष्यतस्तवाभद्रावभद्रे जठराधमौ।। लोकान् सपालांस्त्रींश्चण्डि मुहुराक्रन्दयिष्यतः।।; भागवत पुराण;3. 14. 37. 38 तुम्हारा चित्त कामवासना से मलिन था और वह समय भी प्रशस्त नहीं था इसलिए तुम्हारे गर्भ से दो बड़े अमंगल और अधम पुत्र होंगे जो सम्पूर्ण लोक और लोकपालों को अपने अत्याचारों से रूलायेंगे।
53. यथा कर्म तथा लाभ इति शास्त्रनिदर्शनम्। यथा बीजं तथांकुरः।; महाभारत; शान्ति पर्व
54. कौशल्ये देवरस्तेऽस्ति सोऽद्यत्वानु प्रवेक्ष्यति।; महाभारत; आदिपर्व; अध्याय–१0६; श्लोक–२
55. महाभागो महावीर्यो महाबुद्धिर्भविष्यति।।; महाभारत; आदिपर्व; अध्याय–१0६; श्लोक–६ किंतु मातुः सवै गुण्यादन्ध एव भविष्यति।।; महाभारत; आदिपर्व; अध्याय–१0६; श्लोक–१0
56. अयंन्च ते शुभे गर्भः श्रेयानुदरमागतः। धर्मात्मा भविता लोके सर्व बुद्धिमतांवरः।।; महाभारत; आदिपर्व; अध्याय–१0६; श्लोक–२७
57. यस्मात् पाण्डुत्वमापन्ना विरूपं प्रेक्ष्यमामिह।।; महाभारत; आदिपर्व; अध्याय–१0६;श्लोक–१७ तस्मादेष सुतस्ते वै पांडुरेव भविष्यति।।; महाभारत; आदिपर्व; अध्याय–१0६; श्लोक–१८
58. स मनसा ध्यायेद्हयद्वा अहं किंचन मनसा धारयामि तथैव तद् भविष्यति। तदह स्म तथैव भवति। गोपथ ब्राह्मण
59. 'यो यच्छ्रद्धः स एव सः' ; गीता; अध्याय–१७; श्लोक–३

60. यंयमंतमभि कामे भवति यंकामं कामयते सोऽस्य संकल्पादेय समुतिष्ठति ।; छांदोग्योपनिषद्
61. दुर्गन्धदुर्दनानि परिहरेत्, उद्वेजनीयाष्व कथाः, क्रोध–शयसंकरांश्च भावान् परिहरेत् ।; सुश्रुत; शरीरस्थानम्; अध्याय–३; सूत्र–१0; पृष्ट–८८
62. A pregnant woman should be shielded as for as possible from all worry and excitement. Ten Teacher's Midwifery. A pregnant woman should never be told tales of horror, and the tales ot difficult labour are specially to be avoided. The connection between shock and fear, sudden change in the adrenalin content of the blood is known to us, we further know that a constant axchange of matter between the mater- nal blood and that of the chold takes place. And, therefore, we can very well imagine that in this way the chold feels the reaction of what occurs in the mother. *Ideal Birth.*
63. गृहस्थाश्रम–प्रवेशिका; चतुर्थ सोपान–इच्छानुकूल संतति; पृष्ठ–४५ ।
64. चरकसंहिता; शरीरस्थानम्; अष्टमोऽध्याय ।
65. आहाराचारचेष्टाभिर्यादृशीभिः समन्वितौ ।; सुश्रुतसंहिता; शरीरस्थानम्; तृतीयोऽध्याय; सूत्र–४८
66. इच्छेतां यादृशं पुत्रं तद्पचरितांश्च तौ। चिन्तयेतां जनदांस्तदाचारपरिच्छदौ ।। अष्टांगहृदय